2007: छ.ग उ.न्या:11962

उच्च न्यायालय छत्तीसगढ़, बिलासपुर

.....

एकल पीठ : माननीय श्री दिलीप रावसाहब देशमुख,न्यायमूर्ति

.....

.....

दीवानी पुनरीक्षण क्रमांक 768 of 1999

आवेदक लक्ष्मी प्रसाद, पिता- स्वर. शंकर प्रसाद दुबे, कृषक, निवासी- पामगढ़, तहसील- पामगढ़, जिला- बिलासपुर (मध्य प्रदेश)

बनाम

अनावेदकगण

1. ग़ुलाम अली, पिता शहादत अली, उम्र लगभग 65 वर्ष
2. उपकार अली, पिता शहादत अली, उम्र लगभग 62 वर्ष
3. महमूदा बेगम, पत्नी अरमान खान, उम्र लगभग 60 वर्ष
4. कुरबान अली, पिता ग़ुलाम अली, उम्र लगभग 45 वर्ष
5. उस्मान अली, पिता ग़ुलाम अली, उम्र लगभग 43 वर्ष
6. हामिद अली, पिता ग़ुलाम अली, उम्र लगभग 39 वर्ष
7. कासिम अली, पिता ग़ुलाम अली, उम्र लगभग 41 वर्ष
8. राशिदा बेगम, पुत्री ग़ुलाम अली, उम्र लगभग 35 वर्ष, पत्नी सफर मोहम्मद (क्रमांक 1-8 के सभी) वर्तमान निवासी मोदवापाली रोड, गंज खरसिया के पीछे, जिला रायगढ़ (मध्य प्रदेश)
9. जमीला बेगम, विधवा नासिरुद्दीन, चूड़ीवाली (डोमरा रिक्शावाला के पास), काशी नगर, कोरबा, जिला कोरबा (मध्य प्रदेश)
10. मुन्नी बेगम, पत्नी याकूब खान, ऑपरेटर, निवासी ग्राम जुनाडीह, तहसील कटघोरा, जिला बिलासपुर (मध्य प्रदेश)
11. कासिदा बेगम, पत्नी अहमद अली, सुपरहिट टेलर्स के पास, तालापारा, बिलासपुर (मध्य प्रदेश)
12. एस.एम. मेंधेकर, अधिवक्ता, राजेंद्र नगर, बिलासपुर

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 115 के अंतर्गत दीवानी पुनरीक्षण

.....

उपस्थित: आवेदक की ओर से श्री अविनाश के. मिश्रा, विद्वान अधिवक्ता।
आवेदक स्वयं भी उपस्थित हैं।
अनावेदक क्रमांक 1, 4 से 9 और 11 की ओर से श्री श्री कुमार अग्रवाल, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता, के साथ श्री गौतम खेत्रपाल, विद्वान अधिवक्ता।
अन्य अनावेदकों की ओर से कोई उपस्थित नहीं है।

.....

आदेश

(दिनांक 21वा नवंबर, 2007 को पारित)

यह पुनरीक्षण, प्रतिवादियों में से एक द्वारा, विविध सिविल अपील क्र. 47/98 में श्रीमती निर्मला सिंह, पंचम अपर जिला न्यायाधीश, बिलासपुर (जिन्हें एतद्पश्चात् 'निचला अपीलीय न्यायालय' कहा गया है) द्वारा पारित आदेश दिनांक 22-01-1999, जिसके द्वारा सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (जिन्हें एतद्पश्चात् 'संहिता' कहा गया है) के आदेश 43 नियम 1(घ) के अधीन प्रतिवादियों की अपील खारिज कर दी गई थी, के विरुद्ध प्रस्तुत किया गया है। इस अपील में, प्रतिवादियों ने, विविध सिविल प्रकरण क्र. 17/97 में श्री जी.एस. नेताम, तृतीय व्यवहार न्यायाधीश वर्ग-II, बिलासपुर (जिन्हें एतद्पश्चात् 'विचारण न्यायालय' कहा गया है) द्वारा पारित आदेश दिनांक 17.10.1997 को चुनौती दी थी, जिसके द्वारा विचारण न्यायालय द्वारा सिविल वाद क्र. 117-ए/88 में पारित एकपक्षीय निर्णय एवं डिक्री दिनांक 2 3.07.1990 को अपास्त करने हेतु संहिता के आदेश 9 नियम 13 के अधीन उनका आवेदन अस्वीकार कर दिया गया था।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

(2) यह मामला दर्शाता है कि संहिता की धारा 9 नियम 13 के तहत एकपक्षीय निर्णय और डिक्री को अपास्त करने हेतु आवेदन दाखिल करने में हुई देरी को माफ करने के लिए परिसीमा अधिनियम, 1963 (इसके पश्चात् 'अधिनियम' के रूप में संदर्भित) की धारा 5 के तहत एक आवेदन पर विचार करते समय न्यायालय द्वारा एक पाण्डित्यपूर्ण और अति-तकनीकी दृष्टिकोण अपनाने से न्याय की पूरी तरह से विफलता हुई है। इसलिए, मुकदमेबाजी के संक्षिप्त इतिहास को प्रकट करना आवश्यक है, जिसमें प्रतिवादी 1967 से मामला लड़ रहे हैं। प्रतिवादी लक्ष्मी प्रसाद (पुनरीक्षणकर्ता), बद्री प्रसाद और रामप्यारी क्रमशः शिव शंकर प्रसाद के दो बेटे और विधवा हैं। 1963 में, लक्ष्मी प्रसाद और बद्री प्रसाद ने एक पंजीकृत विक्रय-पत

्र के माध्यम से अब्दुल नेवाज नामक व्यक्ति से ग्राम-चांदीपारा, तहसील-जांजगीर, जिला बिलासपुर (अब जिला-जांजगीर) में स्थित 7.56 एकड़ भूमि की वाद संपत्ति खरीदी थी और कब्जा प्राप्त किया था। राजस्व अभिलेखों में वाद भूमि पर लक्ष्मी प्रसाद और बद्री प्रसाद के नाम नामांतरित किए गए थे। नवंबर, 1966 में अब्दुल नेवाज की मृत्यु हो गई। उनकी पोती रमजान बी ने धोखाधड़ी से अपना नाम वाद भूमि पर नामांतरित करवा लिया। दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 145 के तहत कार्यवाही शुरू की गई जिसमें एस.डी.ओ. ने रमजान बी को कब्जाधारी में घोषित किया; चूंकि एस.डी.ओ. द्वारा पारित आदेश के खिलाफ प्रस्तुत की गई आपराधिक पुनरीक्षण भी विफल रही, लक्ष्मी प्रसाद और उनके भाई बद्री प्रसाद ने वाद भूमि का कब्जा प्राप्त करने के लिए प्रथम सिविल न्यायाधीश वर्ग-II, जांजगीर के समक्ष रमजान बी के खिलाफ सिविल वाद संख्या 4 ए/70 दायर किया, जो उनके पक्ष में और रमजान बी के खिलाफ 05.05.1971 को डिक्री किया गया था। रमजान बी द्वारा प्रस्तुत तृतीय अपर जिला न्यायाधीश, बिलासपुर के समक्ष प्रथम अपील संख्या 24-ए/72 भी 23.10.1972 को खारिज कर दी गई। रमजान बी ने मध्य प्रदेश के उच्च न्यायालय में द्वितीय अपील संख्या 985/72 प्रस्तुत की, जिसे भी 23.07.1979 को खारिज कर दिया गया। इतनी लंबी मुकदमेबाजी के बाद भी, लक्ष्मी प्रसाद और बद्री प्रसाद को कोई राहत नहीं मिली क्योंकि एक राजन बी ने प्रतिवादी लक्ष्मी प्रसाद, बद्री प्रसाद और शिव शंकर प्रसाद के खिलाफ स्थायी निषेधाज्ञा का दावा करते हुए प्रथम सिविल न्यायाधीश वर्ग-I, बिलासपुर के समक्ष सिविल वाद संख्या 4-ए/72 दायर किया था और रमजान बी को भी प्रतिवादी के रूप में शामिल किया था। यह सिविल वाद सिविल न्यायाधीश वर्ग-II, बिलासपुर के समक्ष सिविल वाद संख्या 110-ए/88 के रूप में पंजीकृत किया गया था। सिविल वाद संख्या 4-ए/72 के लंबित रहने के दौरान प्रतिवादी रमजान बी की मृत्यु हो गई और उसके विधिक प्रतिनिधियों को अभिलेख पर लाने की कार्यवाही जारी रही। 16.03.1990 को, सिविल वाद संहिता के आदेश 22 नियम 4 के तहत आवेदन पर जवाब के लिए नियत किया गया था। जवाब दाखिल करने के बजाय, प्रतिवादियों के अधिवक्ता श्री एस.एम. मेंढेकर ने कोई निर्देश नहीं होने का अनुरोध किया। न तो अधिवक्ता ने प्रतिवादियों को इस तरह के कदम के बारे में सूचित किया और न ही न्यायालय द्वारा प्रतिवादियों को कोई नोटिस दिया गया कि उनके अधिवक्ता ने कोई निर्देश नहीं होने का अभिवाक किया है। हैरानी की बात है, न्यायालय ने 16.03.1990 को

WebCopy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

प्रतिवादियों के खिलाफ एकपक्षीय कार्यवाही की और 23.07.1990 को एकपक्षीय निर्णय और डिक्री पारित की।

(3) एकपक्षीय निर्णय एवं डिक्री की तारीख को, पुनरीक्षणकर्ता/प्रतिवादी लक्ष्मी प्रसाद तहसीलदार के रूप में शासकीय सेवा में बिलासपुर से बाहर थे, जबकि भाई बद्री प्रसाद कृषि का काम देखते थे। मुकदमे की पैरवी केवल पिता शिव शंकर प्रसाद द्वारा की जा रही थी, जो एकपक्षीय कार्यवाही से लगभग दो वर्ष पूर्व वृद्धावस्था और दोनों आँखों में मोतियाबिंद के कारण गंभीर रूप से बीमार थे और मामले की सुनवाई में उपस्थित नहीं हो रहे थे। तथापि, उ न्होंने अपने अधिवक्ता श्री एस.एम. मेंढेकर को सूचित किया था कि जब भी अधिवक्ता उन्हें बुलाएँगे, वह किसी तरह न्यायालय में आने की व्यवस्था कर लेंगे।

(4) पुनरीक्षणकर्ता ने सेवा से सेवानिवृत्ति ली और सितंबर, 1990 से बिलासपुर में एक अधिवक्ता के रूप में अभ्यास करना शुरू कर दिया और श्री एस.एम. मेंढेकर से मामले के बारे में कई बार पूछताछ की, जिन्होंने बहुत देर से उन्हें बताया कि चूँकि उन्होंने 16-03-1990 क ो कोई निर्देश नहीं होने का अभिवाक किया था और उसके बाद न्यायालय में उपस्थित नहीं हुए, इसलिए उन्हें नहीं पता था कि मामले का क्या हुआ। पुनरीक्षणकर्ता द्वारा मेरे समक्ष यह भी बताया गया कि सिविल वाद संख्या 117-ए/88 के वाद-शीर्षक में, प्रतिवादी शिव शंकर प्रसाद का नाम और प्रतिवादी लक्ष्मी प्रसाद और बद्री प्रसाद के पिता का नाम सुखदेव प्रसाद के रूप में उल्लेखित था। यह सिविल वाद संख्या 4-ए/72 के वाद-शीर्षक से प्रमाणित होता है। इसे 23.07.1990 को प्रतिवादियों के खिलाफ एकपक्षीय डिक्री पारित होने के बाद मार्च , 1991 में इसे कुछ समय के लिए सही किया गया था। प्रतिवादियों ने 26.11.1990 को संहिता के आदेश 9 नियम 13 के तहत एक आवेदन किया, जिसे सप्तम व्यवहार न्यायाधीश वर्ग-II, बिलासपुर द्वारा विविध सिविल वाद संख्या 16/92 में पारित आदेश दिनांक 14.11.1992 द्वारा कालातीत होने के कारण खारिज कर दिया गया था। इस आदेश को विविध सिविल अपील संख्या 36/92 में जिला न्यायधीश, बिलासपुर के न्यायलय के सप्तम अतिरिक्त न्यायधीश के समक्ष चुनौती दी गई थी। अपीलीय न्यायालय ने विचारण न्यायालय के आदेश को अपास्त कर दिया और अपील को स्वीकार कर लिया। गुलाम अली, यहां अनावेदक क्रमांक 1 ने मध्य प्रदेश के उच्च न्यायालय के समक्ष सिविल पुनरीक्षण संख्या 1041/96 प्रस्तुत किया। यह पुनरीक्षण इस आधार पर स्वीकार किया गया था कि अधिनस्त

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

अपीलीय न्यायालय ने डिक्री की जानकारी की तारीख से परिसीमा की अवधि की गणना करने में तात्विक अनियमितता के साथ अवैध रूप से कार्य किया था। मामले को इस निर्देश के साथ विचारण न्यायालय को प्रतिप्रेषित किया गया था कि वह संहिता के आदेश 9 नियम 13 के तहत आवेदन पर निर्णय लेने के लिए विलंब की माफी के लिए पर्याप्त कारण से संबंधित कारक पर विचार करते हुए मामले का नए सिरे से निर्णय करे।

(5) इसके पश्चात् संहिता के आदेश 9 नियम 13 के अधीन आवेदन पर अगली बार विचारण न्यायालय द्वारा विचार किया गया। पक्षकारों ने कोई अतिरिक्त साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया क्योंकि साक्ष्य पहले ही प्रस्तुत किया जा चुका था। विचारण न्यायालय ने, दर्शाए गए कारण में दोष खोजने और एक अव्यवस्थित आदेश द्वारा याचिका को अस्वीकार करने की प्रवृत्ति अपनाते हुए, एक पाण्डित्यपूर्ण और अति-तकनीकी दृष्टिकोण अपनाया कि चूँकि प्रतिवादी लक्ष्मी प्रसाद को सितंबर, 1990 में एकपक्षीय डिक्री की जानकारी थी, इसलिए 26.11.1990 को संहिता के आदेश 9 नियम 13 के तहत आवेदन दाखिल करने में हुई देरी की माफी के लिए कोई पर्याप्त कारण नहीं था, यद्यपि उसने आदेश के पैरा 22 में यह निष्कर्ष अभिलिखित किया कि आवेदक के पास 16-03-1990 को अनुपस्थित रहने का पर्याप्त और सद्भावपूर्ण कारण था। विविध सिविल अपील संख्या 47/98 में, अधिनस्त अपीलीय न्यायालय ने भी विचारण न्यायालय के तर्क से सहमति व्यक्त की और इस आधार पर अपील खारिज कर दी कि सितंबर, 1990 से पहले, लक्ष्मी प्रसाद द्वारा सिविल वाद की स्थिति का पता लगाने के लिए कोई प्रयास नहीं किए गए थे। विविध सिविल अपील संख्या 47/98 में पारित इस आदेश से व्यथित होकर, पुनरीक्षणकर्ता लक्ष्मी प्रसाद ने यह सिविल पुनरीक्षण प्रस्तुत किया है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

(6) पुनरीक्षणकर्ता लक्ष्मी प्रसाद, जो अब एक अभ्यासरत अधिवक्ता हैं, जिन्होंने मामले पर बहस की, तथ्यों और कानून दोनों पर पूरी तरह से तैयार थे, इस मुद्दे पर सभी सुसंगत निर्णयों को खोजा और उन्हें पूरी निष्पक्षता के साथ प्रस्तुत करते हुए निवेदन किया कि विचारण न्यायालय ने 16.03.1990 को प्रतिवादियों के खिलाफ एकपक्षीय कार्यवाही करने में अवैध रूप से कार्य किया जब अधिवक्ता श्री एस.एम. मेंढेकर ने कोई निर्देश नहीं होने का अभिवाक किया क्योंकि कोई निर्देश नहीं होने का अभिवाक करने से पहले अधिवक्ता ने प्रतिवादियों को सूचित नहीं किया और विचारण न्यायालय द्वारा प्रतिवादियों को नोटिस भी नहीं भेजा गया था कि उनके अधिवक्ता ने कोई निर्देश नहीं होने की सूचना दी है। **ताहिल राम ईसरदास**

सदारंगानी और अन्य बनाम रामचंद ईसरदास सदारंगानी और अन्य, AIR 1993 SC 1182 और **मलकीत सिंह बनाम जोगिंदर सिंह, 1998 (1) MPWN SN 61 (SC)** पर अवलंब लिया गया है। यह आग्रह किया गया कि विचारण न्यायालय द्वारा पारित एकपक्षीय डिक्री इस प्रकार विकृत थी। **एन. बालकृष्णन बनाम एम. कृष्णमूर्ति, (1998) 7 SCC 123, एम.के. प्रसाद बनाम पी. अरुमुगम, AIR 2001 SC 2497, राम नाथ साओ उर्फ राम नाथ साहू और अन्य बनाम गोबर्धन साओ और अन्य, AIR 2002 SC 1201** और **श्रीमती देवकी बाई बनाम बलराम सिंह गोंड और अन्य, 2007(2) CGLJ 110** पर अवलंब लिया गया है, यह तर्क देते हुए कि दोनों अधिनस्त न्यायालयों द्वारा अधिनियम की धारा 5 के तहत विवेक का प्रयोग करने से इनकार पूरी तरह से असमर्थनीय मनमाना और विकृत पर आधार था और, इसलिए, पुनरीक्षणीय अधिकार क्षेत्र के प्रयोग में, इस न्यायालय को हस्तक्षेप दिखाना चाहिए। यह भी प्रस्तुत किया गया कि विकृति स्पष्ट रूप से दिखाई दे रही थी क्योंकि दोनों अधिनस्त न्यायालयों ने यह ध्यान नहीं दिया कि गैर-आवेदकों - डिक्री धारक के गवाह शेख गुलाम अली ने स्वीकार किया कि शिव शंकर प्रसाद, जिनकी आयु लगभग 85 वर्ष थी, 1990 से एक वर्ष पहले से खराब स्वास्थ्य और बुढ़ापे के कारण न्यायालय में उपस्थित नहीं हो रहे थे और श्री एस.एम. मेंढेकर, अधिवक्ता मामले में प्रतिवादियों की ओर से पेश हो रहे थे। यह भी स्वीकार किया गया कि लक्ष्मी प्रसाद तहसीलदार के रूप में बिलासपुर से दूर तैनात थे और कभी भी न्यायालय की सुनवाई में शामिल नहीं हुए। यह भी स्वीकार किया गया कि लक्ष्मी प्रसाद जून, 1990 में सेवानिवृत्त हुए थे और उसके कई महीनों बाद बिलासपुर में एक अधिवक्ता के रूप में अभ्यास शुरू कर दिया था। अधिनस्त न्यायालयों ने डॉ . बी.एल. मिश्रा के साक्ष्य को भी नजरअंदाज कर दिया कि शिव शंकर प्रसाद, जिनकी आयु लगभग 80 वर्ष थी, दोनों आंखों के मोतियाबिंद से पीड़ित थे और बिना सहारे के चल नहीं सकते थे। प्रतिवादियों द्वारा प्रस्तुत निर्णायक साक्ष्य से यह भी पता चला कि बद्री प्रसाद गांव में कृषि की देखभाल कर रहे थे और कभी भी न्यायालय नहीं गए। इन आधारों पर, यह आग्रह किया गया कि दोनों अधिनस्त न्यायालयों द्वारा लिया गया दृष्टिकोण पाण्डित्यपूर्ण और अति-तकनीकी था और इसके परिणामस्वरूप न्याय की विफलता हुई। यह भी तर्क दिया गया कि दोनों अधिनस्त न्यायालयों ने मुकदमेबाजी में शामिल दांव और प्रतिवादियों द्वारा उनके लिखित बयान में उठाए गए कानून के गंभीर सवालों पर ध्यान नहीं दिया। दोनों अधिनस्त न्यायालयों ने रमजान बी द्वारा दायर मुकदमे में मुकदमेबाजी की बाढ़ को भी नजरअंदाज कर

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

दिया, जिसे प्रतिवादियों ने 1970 से लड़ा था और 1979 में दूसरी अपील के चरण तक जीता था और राज बी द्वारा दायर मुकदमे की तंग करने वाली प्रकृति को भी नजरअंदाज कर दिया। यह आग्रह किया गया कि यह दिखाने के लिए किसी भी चीज के अभाव में कि देरी दुर्भावनापूर्ण, जानबूझकर थी या कोई विलंबकारी रणनीति अपनाई गई थी, इसे माफ कर दिया जाना चाहिए था और एकपक्षीय निर्णय और डिक्री को अपास्त कर दिया जाना चाहिए था क्योंकि अधिनियम की धारा 5 और साथ ही संहिता के आदेश 9 नियम 13 में आने वाली अभिव्यक्ति "पर्याप्त कारण" को सारवान न्याय को आगे बढ़ाने के लिए एक उदार व्याख्या मिलनी चाहिए थी।

(7) दूसरी ओर, अनावेदक क्रमांक 1 और 4 से 9 तथा 11 की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री श्रीकुमार अग्रवाल ने जोर-शोर से यह निवेदन किया कि दोनों अधिनस्त न्यायालयों द्वारा अभिलिखित यह समवर्ती तथ्य निष्कर्ष कि अधिनियम की धारा 5 के अधीन विलंब की माफी हेतु कोई पर्याप्त कारण नहीं थे, विवेक के सकारात्मक प्रयोग का परिणाम है और इस न्यायालय द्वारा इसमें हस्तक्षेप नहीं किया जाना चाहिए, और पुनरीक्षणीय अधिकारिता में तो और भी कम, जब तक कि विकृति स्पष्ट रूप से न हो। **मस्जिद कच्चा टैंक , नाहन बनाम तुफैल मोहम्मद, AIR 1991 SC 455** और इस न्यायालय द्वारा सिविल पुनरीक्षण संख्या 272/2002 **(सुनील कुमार पाठक बनाम छत्तीसगढ़ राज्य और अन्य)** में दिनांक 25-07-2007 को पारित एक आदेश पर भरोसा किया गया। यह भी तर्क दिया गया कि अधिनियम की धारा 5 के तहत किसी आवेदन की अस्वीकृति एक डिक्री नहीं है, बल्कि एक आनुषंगिक आदेश है जिसके विरुद्ध संहिता के आदेश 43 नियम 1(डी) के तहत कोई अपील नहीं की जा सकती थी। **मामूदा खातून और अन्य बनाम बेनियान बीबी और अन्य, AIR 1976 कलकत्ता 415 (FB)** में एक पूर्ण न्यायपीठ के निर्णय पर भरोसा किया गया। इस प्रकार, यह तर्क दिया गया कि निचले अपीलीय न्यायालय के समक्ष प्रतिवादियों द्वारा प्रस्तुत की गई अपील पोषणीय नहीं थी। विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने आगे तर्क दिया कि मध्य प्रदेश के उच्च न्यायालय ने सिविल पुनरीक्षण संख्या 1041/1996 में पारित अपने आदेश दिनांक 22-04-1997 में यह माना था कि दोनों अधिनस्त न्यायालयों ने डिक्री की जानकारी की तारीख से परिसीमा की अवधि की गणना करने में सारभूत अनियमितता के साथ अवैध रूप से कार्य किया था। चूँकि यह विवादित नहीं था कि वाद का नोटिस विधिवत तामील किया गया था, संहिता के आदेश 9 नियम 13 के तहत आवेदन दाखिल करने के लिए

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

30 दिनों की परिसीमा अधिनियम के अनुच्छेद 123 के तहत डिक्री की तारीख से शुरू हुई, इसलिए, अधिनियम की धारा 5 की सहायता अधिनियम के अनुच्छेद 123 में प्रदान की गई परिसीमा की अवधि को दरकिनार करने के लिए नहीं ली जा सकती क्योंकि डिक्री की जानकारी की तारीख से परिसीमा शुरू होने का प्रश्न अधिनियम के अनुच्छेद 123 के तहत केवल तभी उत्पन्न होगा जब समन या नोटिस प्रतिवादियों पर विधिवत तामील नहीं किया गया हो। इन आधारों पर, यह तर्क दिया गया कि इस न्यायालय द्वारा पुनरीक्षणीय अधिकारिता के प्रयोग में आक्षेपित आदेश में किसी भी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

(8) प्रतिद्वंद्वी प्रस्तुतियों पर अत्यंत सावधानी से विचार करने के पश्चात्, मैंने अभिलेख का परिशीलन किया। संहिता का आदेश 9 नियम 13 इस प्रकार है:

> "आदेश IX नियम 13. प्रतिवादियों के विरुद्ध एकपक्षीय डिक्री अपास्त करना।- किसी भी मामले में जिसमें किसी प्रतिवादी के विरुद्ध एकपक्षीय डिक्री पारित की जाती है, वह उस न्यायालय में, जिसके द्वारा डिक्री पारित की गई थी, उसे अपास्त करने के आदेश के लिए आवेदन कर सकता है; और यदि वह न्यायालय को संतुष्ट करता है कि समन की तामील सम्यक् रूप से नहीं हुई थी, या कि जब वाद सुनवाई के लिए बुलाया गया था, तब उसे उपस्थित होने से किसी पर्याप्त कारण से रोका गया था, तो न्यायालय ऐसी लागतों, न्यायालय में भुगतान या अन्यथा जैसी शर्तों पर, जैसा वह उचित समझे, उसके विरुद्ध डिक्री को अपास्त करने का आदेश देगा, और वाद के साथ आगे बढ़ने के लिए एक दिन नियत करेगा:
>
> परंतु यह कि जहाँ डिक्री ऐसी प्रकृति की है कि इसे केवल ऐसे प्रतिवादी के विरुद्ध अपास्त नहीं किया जा सकता है, इसे सभी या किसी भी अन्य प्रतिवादी के विरुद्ध भी अपास्त किया जा सकता है:
>
> परंतु यह और कि कोई भी न्यायालय केवल इस आधार पर पारित एकपक्षीय डिक्री को अपास्त नहीं करेगा कि समन की तामील में कोई अनियमितता हुई है यदि वह संतुष्ट है कि प्रतिवादी को सुनवाई की तारीख की सूचना थी और उसके पास वादी के दावे का जवाब देने और उपस्थित होने के लिए पर्याप्त समय था।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

स्पष्टीकरण- जहाँ इस नियम के तहत एकपक्षीय पारित डिक्री के विरुद्ध कोई अपील हुई है, और अपील का निपटारा इस आधार के अलावा किसी अन्य आधार पर किया गया है कि अपीलकर्ता ने अपील वापस ले ली है, तो इस नियम के तहत एकपक्षीय डिक्री को अपास्त करने के लिए कोई आवेदन नहीं होगा।"

(9) जी.पी.श्रीवास्तव बनाम आर.के.रायजादा और अन्य, (2000) 3 SCC 54 में, सर्वोच्च न्यायालय ने, संहिता के आदेश 9 नियम 13 के दायरे और उस तरीके पर विचार करते हुए जिसमें न्यायालय द्वारा यह तय करते समय विवेक का प्रयोग किया जाना चाहिए कि क्या प्रतिवादियों को किसी पर्याप्त कारण से उपस्थित होने से रोका गया था जब वाद सुनवाई के लिए पुकारा गया था, निम्नानुसार टिप्पड़ी कि गई :

"7. सीपीसी के आदेश 9 नियम 13 के तहत किसी प्रतिवादी के खिलाफ पारित एकपक्षीय डिक्री को न्यायालय की संतुष्टि पर अपास्त किया जा सकता है कि या तो प्रतिवादी पर समन की तामील सम्यक् रूप से नहीं हुई थी या उसे किसी "पर्याप्त कारण" से उस समय उपस्थित होने से रोका गया था जब वाद सुनवाई के लिए पुकारा गया था। जब तक सुनवाई की तारीख को मामले में प्रतिवादी की अनुपस्थिति के लिए "पर्याप्त कारण" नहीं दिखाया जाता है, तब तक न्यायालय के पास एकपक्षीय डिक्री को अपास्त करने की कोई शक्ति नहीं है। "किसी भी पर्याप्त कारण से उपस्थित होने से रोका गया था" शब्दों का उदारतापूर्वक अर्थ लगाया जाना चाहिए ताकि न्यायालय पक्षकारों के बीच पूर्ण न्याय कर सके, विशेष रूप से जब दोषी पक्ष पर कोई लापरवाही या निष्क्रियता का आरोप नहीं लगाया जा सकता है। आदेश 9 नियम 13 के प्रयोजन के लिए पर्याप्त कारण को एक लोचदार अभिव्यक्ति के रूप में समझा जाना है जिसके लिए कोई कठोर और निश्चित दिशानिर्देश निर्धारित नहीं किए जा सकते हैं। न्यायालयों के पास प्रत्येक मामले के विशिष्ट तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए पर्याप्त कारण तय करने में व्यापक विवेक है। अनुपस्थिति के लिए "पर्याप्त कारण" उस तारीख को संदर्भित करता है जिस पर अनुपस्थिति को एकपक्षीय कार्यवाही के लिए एक आधार बनाया गया था और इसे समय से पहले की अन्य परिस्थितियों पर भरोसा करने के लिए नहीं बढ़ाया जा सकता है। यदि सुनवाई के लिए नियत तारीख

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

को प्रतिवादी की अनुपस्थिति के लिए 'पर्याप्त कारण' बनता है, जब उसके खिलाफ एकपक्षीय कार्यवाही शुरू की गई थी, तो उसे उसकी पिछली लापरवाही के लिए दंडित नहीं किया जा सकता है, जिसे पहले नजरअंदाज कर दिया गया था और इस तरह माफ कर दिया गया था।"

(10) अधिनियम का अनुच्छेद 123 इस प्रकार है:

वाद का वर्णन	**परिसीमा की अवधि**	**समय, जिससे अवधि प्रारंभ होती है**
<u>अनुच्छेद 123-</u> एकपक्षीय पारित डिक्री को अपास्त करने या एकपक्षीय डिक्री या सुनी गई अपील को फिर से सुनने के लिए। **स्पष्टीकरण-** इस अनुच्छेद के प्रयोजन के लिए, सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) के आदेश V के नियम 20 के तहत प्रतिस्थापित तामील को सम्यक् तामील नहीं माना जाएगा।	तीस दिन	डिक्री की तारीख या जहाँ समन या सूचना की तामील सम्यक् रूप से नहीं की गई थी, जब आवेदक को डिक्री की जानकारी हुई।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

(11) अधिनियम की धारा 5 इस प्रकार है:

"5. कतिपय दशाओं में विहित काल का विस्तार— कोई भी अपील या कोई भी आवेदन , जो सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश XXI के किसी भी उपबंध के अधीन किसी आवेदन से भिन्न हो, विहित काल के पश्चात् ग्रहण किया जा सकेगा, यदि अपीलार्थी या आवेदक न्यायालय का यह समाधान कर दे कि उसके पास ऐसे काल के भीतर अपील न करने या आवेदन न करने के लिए पर्याप्त हेतुक था।

स्पष्टीकरण— यह तथ्य कि अपीलार्थी या आवेदक विहित काल का अभिनिश्चय या संगणना करने में उच्च न्यायालय के किसी आदेश, प्रथा या निर्णय से भुलावे में पड़ गया था, इस धारा के अर्थ के भीतर पर्याप्त हेतुक हो सकेगा।"

(12) "पर्याप्त कारण" अभिव्यक्ति न केवल संहिता के आदेश 9 नियम 13 में बल्कि अधिनियम की धारा 5 में भी स्थान पाती है और अनेक अवसरों पर सर्वोच्च न्यायालय द्वारा विचार का विषय रही है। **द स्टेट ऑफ वेस्ट बंगाल बनाम द एडमिनिस्ट्रेटर, हावड़ा म्युनिसिपैलिटी और अन्य, (1972) 1 SCC 366** के मामले में, सर्वोच्च न्यायालय ने यह प्रतिपादित किया कि उक्त अभिव्यक्ति की एक उदार व्याख्या की जानी चाहिए ताकि सारवान न्याय को आगे बढ़ाया जा सके जब किसी पक्ष पर कोई लापरवाही, निष्क्रियता या सद्भावना की कमी का आरोप न लगाया जा सके। **सीतल प्रसाद सक्सेना (मृत) द्वारा विधिक् प्रतिनिधि बनाम यूनियन ऑफ इंडिया और अन्य, AIR 1985 SC 1** में, सर्वोच्च न्यायालय ने यह अवधारित किया कि प्रक्रिया के नियम न्याय को आगे बढ़ाने के लिए बनाए गए हैं और उनकी व्याख्या इस प्रकार की जानी चाहिए कि वे दोषी पक्षकारों को दंडित करने के लिए दंडात्मक कानून न बन जाएं।

WebCopy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

(13) एन. बालकृष्णन बनाम एम. कृष्णमूर्ति (पुर्वोक्ति) में, एकपक्षीय डिक्री को अपास्त करने के लिए आवेदन दाखिल करने में 883 दिनों की देरी हुई थी, जिसके लिए विलंब माफी का आवेदन दायर किया गया था। विचारण न्यायालय ने यह पाते हुए कि विलंब की माफी के लिए पर्याप्त कारण बताया गया है, विलंब को माफ कर दिया, लेकिन जब मामला संहिता की धारा 115 के तहत एक पुनरीक्षण आवेदन में उच्च न्यायालय में ले जाया गया, तो यह देखा गया कि आवेदन दाखिल करने में 883 दिनों की विलम्ब का उचित स्पष्टीकरण नहीं दिया गया था, और यह माना गया कि विचारण न्यायालय द्वारा विलंब को माफ करना न्यायोचित नहीं था , जिसके परिणामस्वरूप उसका आदेश उलट गया। सर्वोच्च न्यायालय ने, उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश को अपास्त करते हुए, पैरा 9 से 13 में कानून को संक्षिप्त रूप में इस प्रकार प्रतिपादित किया:

> **"9.** यह एक स्वयंसिद्ध बात है कि विलंब की माफी न्यायालय का विवेकाधिकार का विषय है। परिसीमा अधिनियम की धारा 5 यह नहीं कहती है कि ऐसे विवेकाधिकार का प्रयोग केवल तभी किया जा सकता है जब विलंब

एक निश्चित सीमा के भीतर हो। विलंब की अवधि कोई मायने नहीं रखती; स्पष्टीकरण की स्वीकार्यता ही एकमात्र मानदंड है। कभी-कभी सबसे कम अवधि का विलंब भी अस्वीकार्य स्पष्टीकरण के अभाव के कारण अक्षम्य हो सकता है, जबकि कुछ अन्य मामलों में, बहुत लंबी अवधि के विलंब को माफ किया जा सकता है क्योंकि उसका स्पष्टीकरण संतोषजनक होता है। एक बार जब न्यायालय स्पष्टीकरण को पर्याप्त मानकर स्वीकार कर लेता है, तो यह विवेकाधिकार के सकारात्मक प्रयोग का परिणाम होता है और सामान्यतः उच्च न्यायालय को ऐसे निष्कर्ष में परिवर्तन नहीं करना चाहिए, और पुनरीक्षणीय अधिकारिता में तो बिलकुल नहीं, जब तक कि विवेकाधिकार का प्रयोग पूरी तरह से असमर्थनीय आधारों पर या मनमाने ढंग से या विकृत रूप से न किया गया हो। लेकिन यह एक अलग मामला है जब पहला न्यायालय विलंब को माफ करने से इनकार कर देता है, तो अलग बात है। ऐसे मामलों में , उच्च न्यायालय विलंब के लिए दर्शाए गए कारण पर नए सिरे से विचार करने के लिए स्वतंत्र होगा और ऐसे उच्च न्यायलय के लिए अधिनस्त न्यायालय के निष्कर्ष से अप्रभावित रहते हुए भी अपने निष्कर्ष पर पहुंचना खुला है।"

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

"10. इस तरह के एक अलग रुख का कारण इस प्रकार है:

न्यायालय का प्राथमिक कार्य पक्षकारों के बीच विवाद का अधिनिर्णय करना और सारवान न्याय को आगे बढ़ाना है। विभिन्न स्थितियों में न्यायालय से संपर्क करने के लिए निर्धारित समय-सीमा इसलिए नहीं है कि ऐसे समय की समाप्ति पर एक बुरा कारण एक अच्छे कारण में बदल जाएगा।"

"11. परिसीमा के नियम पक्षकारों के अधिकारों को नष्ट करने के लिए नहीं हैं। वे इसका उद्देश्य यह सुनिश्चित्कर्ता है , कि पक्षकार विलंबकारी रणनीति का सहारा न लें, बल्कि अपने उपचार की शीघ्रता से मांग करें। कानूनी उपचार प्रदान करने का उद्देश्य कानूनी क्षति के कारण हुई क्षति की भरपाई करना है। परिसीमा का कानून इस प्रकार की कानूनी क्षति के निवारण के लिए ऐसे कानूनी उपचार के लिए एक निश्चित अवधि निर्धारित करता है। समय कीमती है और व्यर्थ गया समय कभी वापस नहीं आएगा। समय के बीतने के दौरान,

नए कारण उत्पन्न होंगे, जिससे नए व्यक्तियों को न्यायालयों में जाकर कानूनी उपचार प्राप्त करने की आवश्यकता होगी। इसलिए, प्रत्येक उपचार के लिए एक निश्चित अवधि निर्धारित किया जाना चाहिए। उपचार शुरू करने के लिए अंतहीन अवधि अंतहीन अनिश्चितता और परिणामी अराजकता को जन्म दे सकती है। इस प्रकार परिसीमा का कानून लोक नीति पर आधारित है। यह सूत्र में प्रतिष्ठापित है *interest reipublicae ut sit finis litium* (यह सामान्य कल्याण के लिए है कि मुकदमेबाजी पर एक अवधि लगाई जाए)। परिसीमा के नियमों का उद्देश्य पक्षकारों के अधिकारों को नष्ट करने के लिए नहीं हैं। वे इसका उद्देश्य यह सुनिश्चित करता है, कि पक्षकार विलंबकारी रणनीति का सहारा न लें बल्कि अपने उपचार की शीघ्रता से मांग करें। विचार यह है कि प्रत्येक कानूनी उपचार को विधायी रूप से निर्धारित अवधि के लिए जीवित रखा जाना चाहिए।"

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

"12. एक न्यायालय यह जानता है कि विलंब को माफ करने से इनकार का परिणाम एक वादकर्ता को अपना पक्ष रखने से वंचित करना होगा। यह कोई उपधारणा नहीं है कि न्यायालय से संपर्क करने में देरी हमेशा जानबूझकर होती है। इस न्यायालय ने यह माना है कि परिसीमा अधिनियम की धारा 5 के तहत "पर्याप्त कारण" **शब्दों** को एक उदार व्याख्या मिलनी चाहिए ताकि पर्याप्त न्याय प्राप्त हो सके. देखें शकुंतला देवी जैन बनाम कुंतल कुमारी, AIR 1969 SC 575: (1969)1 SCR 1006 और स्टेट ऑफ डब्ल्यू.बी. बनाम एडमिनिस्ट्रेटर, हावड़ा म्युनिसिपैलिटी, (1972) 1 SCC 366: AIR 1972 SC 749।"

"13. यह याद रखना चाहिए कि विलंब के प्रत्येक मामले में, संबंधित वादकारी की ओर से कुछ चूक हो सकती है। केवल इतना ही उसके अभिवाक को ठुकराने और उसके खिलाफ दरवाजा बंद करने के लिए पर्याप्त नहीं है। यदि स्पष्टीकरण में दुर्भावना की झलक नहीं है या इसे विलंबकारी रणनीति के हिस्से के रूप में सामने नहीं रखा गया है, तो न्यायालय को वादकर्ता के प्रति अत्यंत विचारशीलता दिखानी चाहिए। लेकिन जब यह मानने का उचित आधार हो कि विलंब पक्षकार द्वारा जानबूझकर समय हासिल करने के लिए किया गया था, तो न्यायालय को स्पष्टीकरण की स्वीकृति के खिलाफ झुकना चाहिए। विलंब को माफ करते समय, न्यायालय को विरोधी पक्ष

को पूरी तरह से नहीं भूलना चाहिए। यह ध्यान में रखा जाना चाहिए कि वह एक हारने वाला है और उसे भी काफी बड़े मुकदमेबाजी के काफी बडे खर्चे उठाने पड़े होंगे। यह एक हितकर दिशानिर्देश होगा कि जब न्यायालय आवेदक की ओर से हुई चूक के कारण विलंब को माफ करते हैं, तो न्यायालय विरोधी पक्ष को उसके नुकसान की भरपाई करेगा।"

(14) एन. बालकृष्णन बनाम एम. कृष्णमूर्ति (पुर्वेक्ति) के परिपेक्ष में वर्तमान मामले पर लागू करने पर, दोनों अधिनस्त न्यायालयों द्वारा पारित आदेश में एक से अधिक कारणों से विकृति स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है।

(15) सर्वप्रथम, यह देखा गया है कि 16.03.1990 को सिविल वाद संहिता के आदेश 22 नियम 4 के तहत आवेदन पर जवाब दाखिल करने के लिए नियत था। इस तारीख को, अधिवक्ता श्री एस.एम. मेंढेकर ने कोई निर्देश नहीं होने का अभिवाक किया। लक्ष्मी प्रसाद का यह अभिसाक्ष्य कि अधिवक्ता ने उन्हें यह सूचित नहीं किया कि वह कोई निर्देश नहीं होने का अभिवाक नहीं दिए थे या दिए थे. प्रति-परीक्षा में पूरी तरह से अखंडित है। यह भी अविवादित है कि विचारण न्यायालय ने 16.03.1990 को जब उनके अधिवक्ता ने कोई निर्देश नहीं होने का अभिवाक किया, तो प्रतिवादियों को नोटिस जारी करने का आदेश नहीं दिया। दोनों अधिनस्त न्यायालयों ने यह ध्यान नहीं दिया कि एकपक्षीय निर्णय और डिक्री केवल इसी आधार पर अपास्त किए जाने योग्य थे। **ताहिल राम ईसरदास सदारंगानी और अन्य बनाम रामचंद ईसरदास सदारंगानी और अन्य (पुर्वोक्ति)** में, सर्वोच्च न्यायालय द्वारा यह माना गया था कि जहां प्रतिवादी सुनवाई की तारीख को व्यक्तिगत रूप से उपस्थित नहीं थे और उनके लिए उपस्थित होने वाले अधिवक्ता ने कोई निर्देश नहीं होने का अभिवाक किया था, न्याय के हित में यह आवश्यक था कि पक्षकारों को उपस्थिति की वास्तविक तारीख के साथ एक नया नोटिस भेजा जाना चाहिए था क्योंकि पक्षकार दोषी नहीं था और उसे अधिवक्ता की ओर से हुई चूक के लिए दण्डित नहीं किया जाना चाहिए। इन आधारों पर, सर्वोच्च न्यायालय ने अपील को स्वीकार कर लिया और बॉम्बे के उच्च न्यायालय की एक खंडपीठ के आदेश को अपास्त कर दिया, जिसके द्वारा विचारण न्यायालय द्वारा एकपक्षीय डिक्री को अपास्त करने के लिए ख़ारिज कि गई आवेदन की अस्वीकृति को बरकरार रखा गया था। **मलकीत सिंह बनाम जोगिंदर सिंह (पूर्वोक्त)** में, **ताहिल राम ईसरदास सदारंगानी और अन्य बनाम रामचंद ईसरदास सदारंगानी और अन्य** (पूर्वोक्त) पर

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

अवलंब लेते हुए, सर्वोच्च न्यायालय ने, एक समान स्थिति में, विचारण न्यायालय के आदेश और एकपक्षीय डिक्री के साथ-साथ अपील में जिला न्यायाधीश और सिविल पुनरीक्षण में उच्च न्यायालय के आदेश को भी अपास्त कर दिया। यह माना गया कि अपीलकर्ता वाद का बचाव करने में न तो लापरवाह थे और न ही उपेक्षापूर्ण। उन्होंने एक अधिवक्ता नियुक्त किया था और कार्यवाही का अनुसरण कर रहे थे। इस तथ्यात्मक स्थिति में, विचारण न्यायालय, जिसने स्वीकृत रूप से उनके अधिवक्ता द्वारा कोई निर्देश नहीं होने की सूचना देने के बाद अपीलकर्ताओं को कोई नोटिस जारी नहीं किया था, को न्याय के हित में, विलंब को माफ करने के बाद, एकपक्षीय निर्णय और डिक्री को अपास्त करने के लिए आवेदन को स्वीकार कर लेना चाहिए था और मामले में उस चरण से कार्यवाही करनी चाहिए थी जब अधिवक्ता ने कोई निर्देश नहीं होने की सूचना दी थी। मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में, अपीलकर्ताओं के अधिवक्ता दोषी थे, न कि अपीलकर्ता, जिन्हें नहीं भुगताया जा सकता था।

(16) दोनों अधिनस्त न्यायालयों ने उस मुकदमेबाजी की प्रकृति पर भी ध्यान देने में विफल रहा. जिसमें प्रतिवादी लड़ रहे थे। प्रतिवादियों को अब्दुल नेवाज से एक पंजीकृत विक्रय-पत्र के माध्यम से संपत्ति खरीदने और राजस्व अभिलेखों में अपने नामों का नामांतरण कराने के बावजूद 1966 से कठिनाइयों का सामना करना पड़ा, जब दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 145 के तहत कार्यवाही शुरू की गई और उसके बाद दाण्डिक पुनरीक्षण खारिज होने के कारण प्रतिवादियों को प्रथम व्यवहार न्यायाधीश वर्ग-II, जांजगीर के समक्ष सिविल वाद संख्या 4 ए/70 दायर करने के लिए विवश होना पड़ा। विचारण न्यायालय में सफलता के बावजूद, वाद चलता रहा क्योंकि रमजान बी ने जिला न्यायाधीश के समक्ष प्रथम अपील संख्या 24-ए/72 और उच्च न्यायालय के समक्ष द्वितीय अपील संख्या 985/72 प्रस्तुत की, जिसमें वह असफल रही। दोनों अधिनस्त न्यायालयों ने यह भी ध्यान देने में विफल रहा, कि रमजान बी को भी राज बी द्वारा सिविल वाद संख्या 4-ए/72 में एक पक्षकार के रूप में शामिल किया गया था और वाद में प्रतिवादियों द्वारा कानून के महत्वपूर्ण और जटिल प्रश्न उठाए गए थे। **एम.के. प्रसाद बनाम पी. अरुमुगम** (पुर्वेक्ति) में, सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नानुसार टिप्पड़ी किया:

"9. ..... यद्यपि अपीलकर्ता उतना सतर्क प्रतीत नहीं होता है जितना उसे होना चाहिए था, फिर भी उसका आचरण, कुल मिलाकर, उसे एक गैर-जिम्मेदार वादकारी

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

के रूप में दण्डित जाने का आधार नहीं बनता , उसे और अधिक सतर्क रहना चाहिए था, लेकिन ऐसी अतिरिक्त सतर्कता न अपनाने में उसकी विफलता को, उस संपत्ति के संबंध में, जो स्वीकृत रूप से मूल्यवान है, उसे मुकदमेबाजी से बाहर करने का आधार नहीं बनाया जाना चाहिए था। एकपक्षीय डिक्री को अपास्त करने के लिए आवेदन पर निर्णय लेते समय, न्यायालय को आक्षेपित निर्णय, इसमें शामिल संपत्ति की सीमा और पक्षकारों के दांव को ध्यान में रखना चाहिए था। ....."

(17) एन. बालकृष्णन बनाम एम. कृष्णमूर्ति (पुर्वेक्ति) में, सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नानुसारटिप्पड़ी कि थी :

> **"8**. अपीलकर्ता का आचरण कुल मिलाकर उसे एक गैर-जिम्मेदार वादकारी के रूप में दण्डित जाने का आधार नहीं बनता। उसने वाद का बचाव करने में जो किया, वह उससे बहुत अलग नहीं था जो एक वादकारी सामान्यतः करेगा। बेशक, यह कहा जा सकता है कि उसे थोड़े-थोड़े अंतराल पर अपने अधिवक्ता के पास जाकर मुकदमे की प्रगति की जाँच करके अधिक सतर्क रहना चाहिए था। लेकिन इन दिनों जब हर कोई अपने जीवन के व्यवसाय में पूरी तरह से व्यस्त है, तो ऐसी अतिरिक्त सतर्कता न अपनाने की चूक को उसे एक ऐसे वादकारी के रूप में चित्रित करने के आधार के रूप में इस्तेमाल करने की आवश्यकता नहीं है जो अपनी जिम्मेदारियों से अवगत नहीं है, और उसे कठोर परिणामों का सामना करने के लिए विवश किया जाए।"

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

(18) इस प्रकार, दोनों अधिनस्त न्यायालयों ने यह ध्यान न देने में त्रुटि की कि मामले में प्रतिवादियों के इस मामले में बहुत बड़ा हित जुड़ा था, और वे उनके द्वारा पूर्व में संस्थित वाद में उच्च न्यायालय तक मुकदमा लड़ रहे थे और राज बी द्वारा संस्थित वाद में उनके द्वारा कानून के गंभीर प्रश्न उठाए गए थे। इस प्रकार, जब उन्होंने सिविल कानून में प्रतिष्ठित एक वरिष्ठ अधिवक्ता श्री एस.एम. मेंढेकर को नियुक्त किया था, तो मुकदमेबाजी से जानबूझकर दूर रहकर प्रतिवादियों को कोई लाभ नहीं होता। दोनों अधिनस्त न्यायालयों ने इस बात पर विचार करने में पूरी तरह से विफल रहे कि वादी के गवाह गुलाम अली ने विचारण न्यायालय के समक्ष अपने अभिसाक्ष्य में निम्नलिखित स्वीकृतियाँ की थीं:

क. कि पुनरीक्षणकर्ता लक्ष्मी प्रसाद तहसीलदार के रूप में बिलासपुर से बाहर पदस्थ थे और न्यायालय में सुनवाई में कभी उपस्थित नहीं हुए,

ख. कि लक्ष्मी प्रसाद जून, 1990 में सेवानिवृत्त हो गए थे और उसके कई महीनों बाद बिलासपुर में एक अधिवक्ता के रूप में अभ्यास शुरू कर दिया था

ग. कि अधिवक्ता श्री एस.एम. मेंढेकर विचारण न्यायालय में प्रतिवादियों का प्रतिनिधित्व कर रहे थे,

घ. कि शिव शंकर प्रसाद लगभग 85 वर्ष के थे और 1990 से लगभग एक वर्ष पूर्व से विचारण न्यायालय के समक्ष सुनवाई में उपस्थित नहीं हो रहे थे

ङ. कि वादपत्र के वाद-शीर्षक में शिव शंकर प्रसाद का नाम गलत तरीके से सुखदेव प्रसाद के रूप में और लक्ष्मी प्रसाद तथा बद्री प्रसाद के पिता का नाम भी गलत तरीके से सुखदेव प्रसाद के रूप में उल्लेखित था,

च. कि डॉ. बी.एल. मिश्रा, ए.डब्ल्यू.-1 का यह अभिसाक्ष्य पूरी तरह से अखंडित था कि शिव शंकर प्रसाद लगभग 80 वर्ष के थे और दोनों आँखों के मोतियाबिंद से पीड़ित थे तथा बिना सहारे के चलने में असमर्थ थे, और

छ. कि पुनरीक्षणकर्ता लक्ष्मी प्रसाद का यह अभिसाक्ष्य कि अधिवक्ता श्री एस.एम. मेंढेकर से कई बार संपर्क करने पर, वह 16-03-1990 के बाद मामले की प्रगति के बारे में सूचित नहीं कर सके और उन्होंने केवल यह बताया था कि उन्होंने 16-03-1990 को कोई निर्देश नहीं होने का अभिवाक किया था, पूरी तरह से अखंडित था।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

(19) उपर्युक्त परिस्थितियाँ स्पष्ट रूप से यह दर्शाती हैं कि एकपक्षीय डिक्री को अपास्त करने के लिए आवेदन करने में यदि कोई विलंब हुआ है, तो वह जानबूझकर, दुर्भावनापूर्ण या समय हासिल करने के लिए नहीं था। इसके विपरीत, एकपक्षीय डिक्री को अपास्त करने के लिए आवेदन करने में हुई देरी के लिए पर्याप्त कारण दर्शाया गया था। इस प्रकार, इसमें किसी भी संदेह के लिए कोई जगह नहीं है कि नीचे के दो न्यायालयों का दृष्टिकोण न केवल कानून के विपरीत था, बल्कि निश्चित रूप से विकृत था। **एन. बालकृष्णन बनाम एम. कृष्णमूर्ति** (पुर्व ेक्ति) में सर्वोच्च न्यायालय ने यह अवधारित किया है कि ऐसी स्थिति में, इस न्यायालय द्वारा

पुनरीक्षणीय अधिकारिता के प्रयोग में हस्तक्षेप किया जा सकता है। इस मामले को देखते हुए , अनावेदक क्रमांक 1 और 4 से 9 और 11 के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता का यह तर्क कि दोनों अधिनस्त न्यायालयों द्वारा अभिलिखित तथ्य के समवर्ती निष्कर्ष के मद्देनजर पुनरीक्षण में हस्तक्षेप अनावश्यक है, विफल हो जाता है।

(20) राम नाथ साव उर्फ राम नाथ साहू और अन्य बनाम गोबर्धन साव और अन्य (पुर्वेक्ति) में, सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया है:

> "अधिनियम की धारा 5 या संहिता के आदेश 22 नियम 9 या किसी अन्य समान प्रावधान के अर्थ के भीतर 'पर्याप्त कारण' अभिव्यक्ति की एक उदार व्याख्या की जानी चाहिए ताकि सारवान न्याय को आगे बढ़ाया जा सके जब किसी पक्ष पर कोई लापरवाही, निष्क्रियता या सद्भावना का अभाव आरोप्य न हो। किसी विशेष मामले में प्रस्तुत किया गया स्पष्टीकरण 'पर्याप्त कारण' का गठन करेगा या नहीं, यह प्रत्येक मामले के तथ्यों पर निर्भर करेगा। कदम उठाने में हुई देरी के लिए प्रस्तुत स्पष्टीकरण को स्वीकार या अस्वीकार करने के लिए कोई अनम्य सूत्र नहीं हो सकता। लेकिन एक बात स्पष्ट है कि न्यायालय को दर्शाए गए कारण में दोष खोजने की प्रवृत्ति के साथ नहीं अपनानी चाहिए और निस्तारण अभियान के अति-उत्साह में एक अव्यवस्थित आदेश द्वारा याचिका को खारिज नहीं करना चाहिए। प्रस्तुत स्पष्टीकरण की स्वीकृति नियम होनी चाहिए और अस्वीकृति एक अपवाद, विशेष रूप से तब जब व्यतिक्रमी पक्षकार पर कोई लापरवाही, निष्क्रियता या सद्भावना के अभाव का आरोप नहीं लगाया जा सकता है। दूसरी ओर, मामले पर विचार करते हुए न्यायालयों को इस तथ्य से नजर नहीं हटानी चाहिए कि निर्धारित समय के भीतर कदम न उठाने से दूसरे पक्ष को एक मूल्यवान अधिकार प्रोद्भूत हो गया है जिसे एक सामान्य तरीके से विलंब को माफ करके हल्के में समाप्त नहीं किया जाना चाहिए। हालांकि, मामले पर एक पाण्डित्यपूर्ण और अति-तकनीकी दृष्टिकोण अपनाकर प्रस्तुत स्पष्टीकरण को अस्वीकार नहीं किया जाना चाहिए जब मामले में बहुत कुछ दाव पर लगा हो /या मामले में तथ्य और कानून के विवादस्पद बिंदु शामिल हों, जिससे उस पक्ष को भारी नुकसान और अपूरणीय क्षति हो जिसके खिलाफ वाद या तो व्यतिक्रम या निष्क्रियता से समाप्त हो जाता है और ऐसे पक्ष के गुणागुण पर निर्णय पाने के मूल्यवान अधिकार को विफल कर देता है। मामले पर विचार करते समय, न्यायालयों को उस आदेश के

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

परिणामी प्रभाव के बीच संतुलन बनाना होता है जो वह दोनों में से किसी भी पक्ष पर पारित करने जा रहा है।"

(21) अनावेदक क्रमांक 1 और 4 से 9 तथा 11 की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री श्रीकुमार अग्रवाल द्वारा प्रस्तुत यह तर्क कि अधिनियम के अनुच्छेद 123 के तहत जहाँ समन की विधिवत तामील हो जाती है, परिसीमा डिक्री की तारीख से प्रारंभ होती है , न कि डिक्री की जानकारी की तारीख से और, इसलिए, अधिनियम की धारा 5 को इस आधार पर विलंब की माफी के लिए प्रयोग में नहीं लाया जा सकता कि आवेदक को अधिनियम के अनुच्छेद 123 के तहत 30 दिनों की परिसीमा अवधि की समाप्ति के बाद डिक्री की जानकारी हुई थी, स्वीकार नहीं किया जा सकता है और अस्वीकार किए जाने योग्य है। अधिनियम की धारा 5 के तहत, कोई भी आवेदन विहित अवधि के बाद स्वीकार किया जा सकता है यदि आवेदक न्यायालय को यह समाधान करा दे कि उसके पास ऐसी अवधि के भीतर आवेदन न करने के लिए पर्याप्त हेतुक था। इसलिए, एकपक्षीय डिक्री को अपास्त करने के लिए आवेदन करने में हुई देरी की माफी के लिए अधिनियम की धारा 5 के तहत एक आवेदन को इस आधार पर ख़ारिज नहीं किया जा सकता है कि ऐसी देरी को माफ नहीं किया जा सकता था क्योंकि प्रतिवादियों पर समन की तामील हो गई थी और आवेदक को विहित परिसीमा अवधि की समाप्ति के बाद एकपक्षीय डिक्री की जानकारी हुई थी।

WebCopy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

(22) अनावेदक क्रमांक 1 और 4 से 9 तथा 11 के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री श्रीकुमार अग्रवाल द्वारा यह भी तर्क दिया गया कि संहिता के आदेश 43 नियम 1(डी) के तहत अधिनस्त अपीलीय न्यायालय के समक्ष अपील पोषणीय नहीं थी क्योंकि अपील दाखिल करने में हुई देरी की माफी के लिए अधिनियम की धारा 5 के तहत एक आवेदन को निरस्त / ख़ारिज करने के बाद संहिता के आदेश 9 नियम 13 के तहत एक आवेदन की बर्खास्तगी का आदेश एक डिक्री नहीं है, बल्कि एक आनुषंगिक आदेश है, जिसके खिलाफ संहिता की धारा 115 के तहत एक पुनरीक्षण निहित है, लेकिन संहिता के आदेश 43 नियम 1(डी) के तहत कोई अपील नहीं की जा सकती है। कलकत्ता उच्च न्यायालय के मामूदा खातून और अन्य बनाम बेनियान बीबी और अन्य (पुर्वेक्ति) में एक पूर्ण न्यायपीठ के निर्णय पर अवलंब किया गया था। अधिनियम की धारा 5 के तहत एक आवेदन को ख़ारिज करने का आदेश परिसीमा द्वारा वर्जित होने के कारण संहिता के आदेश 9 नियम 13 के तहत आवेदन को निरस्त करने

के आदेश में विलीन हो जाता है और, इसलिए, मेरी सुविचारित राय में, एकपक्षीय डिक्री को अपास्त करने के लिए एक आवेदन के निरस्तीकरण के आदेश के खिलाफ एक अपील संहिता के आदेश 43 नियम 1(डी) के तहत पोषणीय है। कलकत्ता उच्च न्यायालय की पूर्ण न्यायपीठ द्वारा **मामूदा खातून और अन्य बनाम बेनियान बीबी और अन्य** (पुर्वेक्ति) में लिया गया दृष्टिकोण स्पष्ट रूप से भिन्न है क्योंकि कलकत्ता उच्च न्यायालय की पूर्ण न्यायपीठ अपील दाखिल करने में हुई देरी की माफी के लिए अधिनियम की धारा 5 के तहत एक आवेदन की अस्वीकृति के बाद अपील के ज्ञापन को निरस्त करने के एक आदेश पर विचार कर रही थी और, इसलिए, यह माना गया कि चूंकि ऐसा आदेश एक डिक्री नहीं था, इसलिए कोई अपील निहित नहीं है। हालांकि, वर्तमान मामले में, परिदृश्य अलग है। यह विवादित नहीं किया जा सकता है कि निर्णय और डिक्री, जिसे संहिता के आदेश 9 नियम 13 के तहत एक आवेदन पर अपास्त करने की मांग की गई थी, एक डिक्री थी और, इसलिए, अधिनियम की धारा 5 के तहत एक आवेदन का अस्वीकरण के बाद संहिता के आदेश 9 नियम 13 के तहत आवेदन की अस्वीकृति संहिता के आदेश 43 नियम 1(डी) के तहत पूरी तरह से आच्छादित होगी। स्थिति अलग होगी जैसा कि उद्धृत मामले के कानून में है यदि अधिनस्त अपीलीय न्यायालय ने विलंब की माफी के लिए आवेदन को अस्वीकार करने के बाद विविध सिविल अपील को परिसीमा द्वारा वर्जित के रूप में खारिज कर दिया होता, तो एक नई अपील निहित नहीं होगी और ऐसा आदेश केवल संहिता की धारा 115 के तहत एक पुनरीक्षण के अधीन होता। इस प्रकार, अनावेदक क्रमांक 1 और 4 से 9 और 11 के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री श्रीकुमार अग्रवाल द्वारा प्रस्तुत यह तर्क भी विफल रहता है। एक बार जब विचारण न्यायालय ने यह मान लिया कि 16-03-1990 को प्रतिवादियों की अनुपस्थिति के लिए पर्याप्त कारण था, जि स पहलू पर अधिनस्त अपीलीय न्यायालय द्वारा बिल्कुल भी विचार नहीं किया गया था, तो विचारण न्यायालय को अधिनियम की धारा 5 के तहत आवेदन को स्वीकार कर लेना चाहिए था क्योंकि प्रतिवादियों ने संहिता के आदेश 9 नियम 13 के तहत आवेदन दाखिल करने में हुई देरी के लिए पर्याप्त कारण दर्शाया था। एक बार ऐसी देरी को माफ कर दिया गया, तो विद्वान विचारण न्यायाधीश द्वारा अभिलिखित यह निष्कर्ष कि 16-03-1990 को जब उनके अधिवक्ता ने कोई निर्देश नहीं होने का अभिवाक किया, तो प्रतिवादियों की अनुपस्थिति के लिए पर्याप्त कारण था, जिसके परिणामस्वरूप संहिता के आदेश 9 नियम 13 के तहत आवेदन को स्वीकार कर लिया जाता। इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि पुनरीक्षणकर्ता द्वारा

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

एकपक्षीय डिक्री को अपास्त करने के लिए संहिता के आदेश 9 नियम 13 के तहत आवेदन दाखिल करने में हुई देरी की माफी के लिए अधिनियम की धारा 5 के अर्थ के भीतर पर्याप्त कारण दर्शाया गया था और, इसलिए, दोनों अधिनस्त न्यायालयों द्वारा दर्शाए गए कारण में दोष खोजने और लापरवाही पूर्ण आदेश द्वारा आवेदन को निरस्त करने की उनकी प्रवृत्ति के कारण एक पाण्डित्यपूर्ण और अति तकनीकी तरीके से आवेदन के निरस्त किये जाने के परिणामस्वरूप न्याय की विफलता हुई है। इस प्रकार, आक्षेपित आदेश के साथ-साथ विचारण न्यायालय द्वारा पारित आदेश भी विकृत हैं और संहिता की धारा 115 के तहत इस न्यायालय की पुनरीक्षणीय अधिकारिता के प्रयोग में अपास्त किए जाने योग्य हैं।

(23) परिणामस्वरूप, सिविल पुनरीक्षण स्वीकार किया जाता है। विविध सिविल अपील क्र. 47/98 में पारित आक्षेपित आदेश दिनांक 22-01-1999 तथा विविध सिविल प्रकरण क्र. 17/97 में तृतीय व्यवहार न्यायाधीश वर्ग-II, बिलासपुर द्वारा पारित आदेश दिनांक 17-10-1997 अपास्त किए जाते हैं। सिविल वाद क्र. 117-ए/88 में पारित एकपक्षीय डिक्री दिनांक 23.07.1990 को अपास्त करने हेतु प्रतिवादियों द्वारा प्रस्तुत आवेदन स्वीकार किया जाता है। सिविल वाद क्र. 117-ए/88 को पुनर्स्थापित संस्थित किया जाता है। पक्षकारगण विचारण न्यायालय के समक्ष 3 जनवरी, 2008 को उपस्थित हों। विचरण न्यायलय 16.3.1990 को वाद कि जो स्थिति थी , उसी स्थिति से विधि अनुसार वाद कि कार्यवाही आगे बढाएगी.

WebCopy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

हस्ताक्षर/

दिलीप रावसाहेब देशमुख

न्यायाधीश

अस्वीकरणः हिन्दी भाषा में निर्णय का अनुवाद पक्षकारों के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा । समस्त कार्यालयीन एवं व्यवहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेजी स्वरुप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।

-Translated By Nasreen Khan

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur